भेद में छिपा अभेद

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भेद का अर्थ है द्वैत और अभेद का अर्थ है अद्वैत। अद्वैत एकी भाव है। भेद में मिश्रण रहता है। अभेद में एकत्व रहता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना वह जीवित नहीं रह सकता। साधना अकेले में होती है किन्तु शरीर के स्तर पर शरीर को भोजन, पानी, वस्त्र इत्यादि की आवश्यकता होती है। ये आवश्यकताएं समाज द्वारा पूरी की जाती है। पशुओं का भी समाज होता है। पशुओं के समाज को समज कहते हैं। केवल एक मात्रा का भेद है। किन्तु दोनों में महान अन्तर है। हिरणों के झुण्ड रात में सोते समय समूह में सोता है उनकी अपनी एक विधि है। झुण्ड में सोते समय गर्भवती हिरणी या छोटे बच्चे बीच में सोते हैं। कमजोर हिरण उसके बाद और शक्ति सम्पन्न हिरण किनारे पर सोता है। उन्हें भी आक्रमण से भय रहता है। वे सदैव सजग रहते हैं। कोई भी खतरा आते ही वे सबको सजग कर देते हैं तो समाज का कार्य है रक्षा करना।

समाज की अपनी नियमावली है उसी के अनुसार सबको रीति रिवाजों में बंधकर चलना पड़ता है। समाज में सभी की सीमा रेखा है। सीमा रेखा का उल्लंघन नहीं करना चाहिए, नहीं तो मर्यादा का उल्लंघन होता है। शरीर भेद के कारण है। यह कर्मों का परिणाम है। जो जैसा कर्म करता है उसी कर्म का परिणाम पाने के लिए वैसा शरीर धारण करता है। किन्तु आत्मा एक है। आत्मा और शरीर का सम्बन्ध भेद में छिपे अभेद की भांति है। आत्मा और शरीर दोनों भिन्न–भिन्न हैं। आत्मा चेतन है, शरीर पंचतत्त्वों से बना हाड़–मांस का पिण्ड। आत्मा के योग से शरीर चेतन प्रतीत होता है। किन्तु जैसे ही आत्मा शरीर से निकलता है शरीर जड़वत होकर के पंचतत्त्व में विलीन हो जाता है। इससे प्रतीत होता है कि आत्मा और शरीर दोनों भिन्न–भिन्न हैं।

सृष्टि दो तत्वों से बनी है– चेतन और अचेतन। जो भी तत्व चेतन दिखलायी देते हैं, वे सभी आत्मयुक्त है। पुरुष या आत्मा को चेतन तत्त्व तथा प्रकृति को अचेतन या जड़तत्त्व कहा गया है। पुरुष चेतन है। चेतन ही विषयों का ज्ञाता तथा द्रष्टा होता है। इसे अचेतन नहीं प्राप्त कर सकता। आत्मा ही वह द्रव्य है जिसमें बुद्धि, सुख–दुःख, राग–द्वेष, इच्छा प्रयत्न आदि गुण रहते हैं। ये गुण शरीर के नहीं आत्मा के ही हो सकते हैं। आत्मा देह, इन्द्रिय आदि से भिन्न है, नित्य और व्यापक है। मन से उसका प्रत्यक्ष होता है तथा मैं जानता हूं, मैं करता हूं, मैं सुखी हूं, मैं दुःखी हूं इत्यादि से आत्मा का अस्तित्त्व प्रकट होता है। मन अचेतन है, चित्त चेतन है। शरीर अचेंतन है किन्तु चेतना से युक्त होने के कारण चेतना की सारी क्रिया करता है। वैसे ही मन भी अचेतंन है। मन, वचन तथा शरीर तीनो अचेतन हैं किन्तु चेतना से युक्त होकर चेतना की क्रिया करते हैं।

मन पुद्गलों को ग्रहण करता है। हमारे भाव सूक्ष्मतर है तथा मन भी सूक्ष्म है। वे हमारे सामने नही हैं। जो दिखाई देता है वह शरीर है। उसके भीतर एक सूक्ष्म शरीर है तथा उसके भीतर सूक्ष्मतर शरीर है। हम स्थूल को देखते हैं किन्तु यदि सूक्ष्म और सूक्ष्मतम शरीर के बारे मे चिन्तन न करें तो इस शरीर को समझा नहीं जा सकता। स्थूल शरीर का निर्माण होता है कर्म शरीर के द्वारा और निर्माण मे निमित्त बनती है शरीर पर्याप्ति। वह पुद्गलों को ग्रहण करती है तथा शरीर के निर्माण में सहयोग देती है।

हमारा अस्तित्व चेतन और अचेतन का जटिलतम संयोग है। चेतन है हमारी आत्मा और अचेतन है शरीर। आत्मा अरूप है, अरस है, अगन्ध है और अस्पर्श है, इसलिए वह अदृश्य है। वह शरीर से बंधी हुई है, इस दृष्टि से दृश्य भी है। संसारी आत्मा शरीर मुक्त नहीं रह सकती। वह स्थूल तथा सूक्ष्म किसी न किसी शरीर के आश्रित रहती है। चेतना की अभिव्यक्ति का माध्यम शरीर है। आत्मा और शरीर का सम्बन्ध चिर–पुरातन है। ''सुख–दुःखानुभवसाधनम् शरीरम्'' अर्थात् जिस के द्वारा पौद्गलिक सुख–दुःख का अनुभव किया जाता है, वह शरीर है।

जैन दर्शन की दृष्टि में आत्मा नित्य तथा अनित्य दोनों है। आत्मा का चैतन्य स्वरूप कदापि नहीं छूटता, अतः आत्मा नित्य है। चेतन कभी अचेतन और अचेतन कभी चेतन नहीं बन सकता। आत्म प्रदेशों में परिवर्तन नहीं होता इस दृष्टि से आत्मा अमर है। आत्मा के प्रदेश कभी संकुचित रहते हैं, कभी विकसित रहते हैं, कभी सुख में, कभी दुःख में आत्मा के अनेक प्रकार की अवस्थाएं होती रहती है। इन कारणों से तथा पर्यायान्तर से आत्मा अनित्य है। जैनागमों में पर्यायांश की दृष्टि से आत्मा अनित्य किन्तु द्रव्यांश की दृष्टि से आत्मा नित्य है।

आत्मा शरीर से भिन्न भी है और अभिन्न भी है। स्वरूप की दृष्टि से भिन्न है और संयोग तथा उपकार की दृष्टि से अभिन्न है। आत्मा का स्वरूप चैतन्य है तथा शरीर का स्वरूप जड़ है। इसलिए दोनों भिन्न हैं। संसारावस्था में आत्मा और शरीर का दूध–पानी की तरह, लौह अग्निपिण्ड की तरह एकात्म संयोग होता है। इसलिए शरीर से किसी वस्तु का संस्पर्श होने पर आत्मा में सम्वेदन और कर्म का विपाक होता है। जीव की संसारावस्था व्यावहारिक दृष्टि से है। भेद दृश्य है और अभेद अदृश्य है।